IJNRD.ORG ISSN : 2456-4184
INTERNATIONAL JOURNAL OF NOVEL RESEARCH AND DEVELOPMENT (IJNRD) | IJNRD.ORG
An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

शिक्षा के विभिन्न सोपानों में अध्यापक की भूमिका

सुधीर कुमार सिंह,

सहायक प्रोफेसर बी0एड0,

महाराणा प्रताप राजकीय पी0जी0 कालेज, हरदोई।

सारांश

प्राचीन काल से ही शिक्षक को शिक्षण प्रक्रिया का केन्द्र बिन्दु माना गया है। बिना शिक्षक के शिक्षण की परिकल्पना करना ही असम्भव लगता है चाहे वह पूर्व प्राथमिक शिक्षा, प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा या उच्च शिक्षा हो गुरू का महत्व शिक्षा के हर स्तर महत्वपूर्ण है। आज जब हम राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के क्रियान्यन के लिए प्रयत्नशील है, जो नवीन तकनीकी युग का प्रतिनिधित्व करती है, इसमें तो शिक्षक प्रशिक्षण की आवश्यकता और बढ़ जाती है। एक योग्य, पूर्ण रूप से प्रशिक्षित, नवाचारों से परिपूर्ण, उच्च मूल्य वाला शिक्षक ही परिवर्तनशील भारत की आवश्यकताओं को पूरा कर सकता है।

मुख्य शब्द – अध्यापक, विकास, सोपान

प्रस्तावना

शिक्षक एक सार्वमौमिक एंव बहुआयामी प्रवृत्ति का व्यक्तित्व होता है। प्राचीन भारत में शिक्षा की गुरूकुल प्रणाली का प्रचलन था, जिसमें बालकों का उपनयन संस्कार के गुरूकुल में प्रवेश दिया जाता था, जहॉ वह परा एंव अपरा विद्या का ज्ञान प्राप्त करता था, प्राथमिक शिक्षा के रूप में उसे संस्कारों एवं नैतिक शिक्षा, शारीरिक शिक्षा प्रदान की जाती थी। क्रमशः उसे वेद, वेदांग, दर्शन, नीति शास्त्र का ज्ञान कराया जाता था। शिक्षा की सोपानों एवं अध्ययन की अवधि के आधार पर उसे 'बसु' रुद्र तथा आदित्य कहा जाता था। गुरूकुल में शिक्षक उसे विभिन्न स्तरों पर शिक्षा प्रदान करता है, जिसका आधार औपचारिक एवं अनौपचारिक दोनों प्रकार होता है, प्राथमिक से लेकर उच्च स्तर तक वह छात्रों सें बात्सल्य भाव से उसके स्वास्थ्य, आवास एवं सर्वागिण विकास का प्रबन्ध करता है।

उदेश्य–

1. अध्यापक का महत्व का आकलन करना।
2. विभिन्न सोपानों में अध्यापक की भूमिका।
3. अध्यापक की वास्तविक स्थिति का आकलन।

सम्बन्धित साहित्य का सर्वेक्षण–

डॉ0 कुमार अशोक (2020) ने विद्यालयी शिक्षा में शिक्षक की भूमिका विषय पर अध्ययन किया और स्पष्ट किया कि अध्यापक पीढ़ी दर पीढ़ी ज्ञान का संचरण का सबसे प्रभावशाली तथा सशक्त माध्यम है। अपने शोध में डॉ अशोक ने शिक्षक छात्र अन्त क्रिया को महत्वपूर्ण स्थान दिया है।

देवी कुसुम (2018) ने समावेशन शिक्षा में अध्यापकों के उत्तर दायित्व एवं भूमिका एव समीक्षा के अध्ययन में स्पष्ट किया है, कि अध्यापक शैक्षिक प्रक्रिया का केन्द्र बिन्दु होता है, एवं अध्यापक के प्रशिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए विशेष सुझाव किए है।

दानिजेला माकोवेक (2018) अध्यापक की भूमिका एवं उसक व्यावसायिक विकास की भूमिका पर अध्ययन किया और पाया कि अध्यापक की भूमिका संस्कृति, सामाजिक उत्सव, परिवेश के आधार पर बदलती रहती है, उसका व्यावसायिक दृष्टिकोण उसके व्यक्तित्व के शीलगुण से निर्धारित होते है।

शिंदे विजय (2013) ने अध्यापकों की भूमिका और दायित्व विषय पर अपने शोध पत्र में प्रकाश डाला है, उसने प्राचीन भारत से लेकर आधुनिक भारत के परिवर्तनशील परिस्थिति में अध्यापक की भूमिका का अध्ययन प्रस्तुत किया है, उन्होनें अध्यापक शिक्षा व्यवस्था तथा उसके राजनीति के अनुचित व्यवहार से देश के भविष्य पर बुरा प्रभाव डाल रहे का राजनीतिक विश्लेषण प्रस्तुत किया है।

कुमार, विमल (2022) शिक्षा, शिक्षक एवं समाज, एक पुर्नदृष्टि विषय पर अपने आलेख में शिक्षक की भूमिका को रेखांकित किया है। विभिन्न आयोगों का संदर्भ देते हुए 21वीं सदी का भारत निर्माण अध्यायपक शिक्षा में साकारात्मक एवं प्रासगिक परिवर्तन करके ही प्राप्त किया जा सकता है।

विवेचना–

बौद्ध कालीन शिक्षा में प्रारम्भिक शिक्षा का आधार बौद्ध दर्शन के शिक्षा सिद्वान्तों का शामिल किया जाता है, प्रारम्भिक शिक्षा बौद्ध मठों में होती थी, यह मुख्य रूप से बौद्ध धर्म के अनुयामिवों के साथ–साथ जन साधारण के लिए उपलब्ध थी, प्रारम्भिक शिक्षा के लिए मुख्य बौद्ध भिक्षु ही अध्यापक के रूप में कार्य करते थे, किसी विशिष्ती कृति पद्धति की आवश्यकता नही थी। प्रबज्जा संस्कार द्वारा बालक की बौद्ध मठ में प्रवेश दिया जाता था। जहॉ उसे 10 आदेशों का पालन करना पड़ता था। जो उसमें संस्कारों का विकास करती थी।

बौद्ध कालीन शिक्षा में अध्यापक को बौद्ध दर्शन का ज्ञान होना नितान्त आवश्यक था, वह अपने शिष्य के सर्वकल्याण एवं सभी प्रकार की विद्याओं में निरपेक्ष रूप से उसे प्रशिक्षित करना, बौद्ध काल में व्यवस्थित शिक्षा संस्थाओं की स्थापना का उदाहरण मिलता है। नालन्दा, तक्षशिला, बलभी, विक्रमशिला इत्यादि प्रसिद्ध विश्वविद्यालय थे। इस काल में अध्यापक, अपने शिष्यों को बौद्ध साहित्य का अध्ययन कराते थे, इसके अलावा उसे विभिन्न विषयों में पारंगत करते थे, शिक्षा का स्वरूप ज्यादातर अध्यापक केन्द्रित था।

मध्यकालीन शिक्षा, मुख्य रूप से मुस्लिम शिक्षा पर आधारित थी, पैगम्बर मुहम्मद साहब ने कहा था, कि 'दान में धन की अपेक्षा अपने बच्चों को शिक्षा देना कही अच्छा है। छात्रों की कलम की स्याही शहीदों के खून से भी अधिक पवित्र है।'' मुस्लिम कालीन शिक्षा में मुख्य रूप से शिक्षा के दो सोपानों की चर्चा की गयी है, जो कि मकतब एवं मदरसा के रूप में आधारित है। मकतब का शिक्षक बालकों को मुख्य रूप से प्रारम्भिक शब्द ज्ञान तथा प्रारम्भिक धार्मिक प्रार्थनाओं का ज्ञान कराता था, उसक मुख्य उदेश्य कुरान की आयते को कंठस्थ कर लेता था। मदरसा उच्च शिक्षा का केन्द्र बिन्दु होते है, जो मूलरूप से मस्जिदों से सम्बन्धित थे। मदरसा का शब्दिक अर्थ ''भाषण देना है'' मदरसा शिक्षक मूल रूप से अपने छात्रों को लैकिक तथा धार्मिक शिक्षा में पांरगत करने का प्रयास करते थे, इसके लिए छात्रों को कठोर दण्ड देने की परम्परा थी।

उपरोक्त विभिन्न कालों में शिक्षा व्यवस्था का विश्लेषणात्मक स्वरूप पर विचार किया जाय तो मुख्य रूप से दो निष्कर्ष निकाले जा सकते है।

1. शिक्षा व्यवस्था अध्यापक केन्द्रित थी।
2. शिक्षा व्यवस्था धार्मिक शिक्षा पर आधारित थी।

16वीं शताब्दी के आस–पास शिक्षा में मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों का प्रयोग होना शुरू हुआ, पूरी दुनिया में शिशु शिक्षा आन्दोलनों का विकास शुरू हुआ। किण्डरगार्टन, मान्टेसरी, नर्सरी, इत्यादि पद्वतियों का विकास हुआ, जिसमें शिक्षा का केन्द्र विद्यार्थी हो गया और समस्त शैक्षिक पद्धतियों का निर्माण इसी स्वरूप में होने लगा।

पाश्चात्य स्कूलों जैसे आदर्शवाद, प्रयोजनवाद, यथार्थवाद प्रकृतिवाद अन्य विचारधाराओं में शिक्षा के स्वरूप को उद्धाटित करने का प्रयास किया गया है। आदर्शवादी शिक्षक की प्रमुख विशेषताओं में बताया गया है, कि आदर्शवादी शिक्षक उच्च चरित्र का होना चाहिए उसे शिक्षक का मित्र, हितैषी तथा दर्शानिक होना चाहिए। आदर्शवादी शिक्षक का एक मात्र उदेश्य अपने विद्यार्थियों का सर्वागिण विकास करना होता है। प्रकृतिवादियों का मानना था, कि शिक्षक को सीखने के लिए उसी स्वभाभिक शक्तियों का विकास करने के लिए अनुकूल परिस्थितियों का निर्माण करें। इसी प्रकार से प्रयोजनवादियों ने शिक्षक को सामाजिक परिस्थितियों का सबसे ज्ञाता माना है, और बालक में सामाजिक समायोजन का

विकास करना, सामाजिक उत्तरदायित्व से परिचित करना शिक्षक का पावन कर्तत्व माना गया है। महान शिक्षा शास्त्री जॉन डीवी ने शिक्षक को पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि बताया है। प्रयोजनवादियों ने शिक्षक के एक अति महत्वपूर्ण गुणों के रूप में स्पष्ट किया कि उसे परिवर्तनशील परिस्थिति का ज्ञान होना चाहिए। यथार्यवादियों ने विज्ञान परक शिक्षक पर बल दिया है। बरट्रैण्ड रसेल ने शिक्षक को बौद्धिक दैत्य के रूप में बताया है। अर्थात शिक्षक में ज्ञान का सागर उमड़ता है।

ब्रिटिश काल में शिक्षक के पेशे में जो सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन आया कि अध्यापक को सेवा से वेतन युक्त अध्यापक में परिवर्तित कर दिया गया। मैकाले योग्य शिक्षक उसे मानता था, जो पाश्चात्य ज्ञान, विज्ञान का पूर्ण ज्ञान हो। वुड डिस्पैच जिसे भारत में शिक्षा का मैग्नाकार्ता कहा गया है। उसमें सर्वप्रथम इस तथ्य को उजागर किया गया कि अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए प्रशिक्षण विद्यालयों की स्थापना की जाय, ताकि प्रशिक्षित योग्य शिक्षकों का निर्माण हो सके।

स्वतन्त्रता बाद भारत में उच्च शिक्षा के विकास के लिए विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948) का गठन किया गया जिसमें शिक्षको के जीवन स्तर में सुधार के लिए विभिन्न प्रकार के सुझाव दिये उसमें कुछ संस्तुतियों का उल्लेख करना, समीचीन प्रतीत होता है।

महाविद्यालय तथा विश्वविद्यायल शिक्षकों को उच्च वेतनमान प्रदान किये जाने की बात की है। अध्यापकों की बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध कराने जैसे आवास की सुविधा, भविष्य निधि कार्य का निर्धारण इत्यादि किया गया। शिक्षकों के महत्व और उत्तरदायित्व दोनों पर राधाकृष्णन आयोग में विस्तृत चर्चा की गयी। आयोग द्वारा भौतिक सुविधाओं की उपलब्धता पर विशेष जोर दिया गया, प्रशिक्षित कर्मचारी वर्ग की उपलब्धता पर बल दिया गया।

मुदालियर कमीशन द्वारा शिक्षकों के जीवनस्तर उठाने के लिए विभिन्न प्रकार की सिफारिशे की गयी थी, जिसमें त्रिलाभ योजना, अध्यापकों के पाल्य को निःशुल्क शिक्षा, अवकाश उपयुक्त व्यवस्था, शिक्षकों को प्रशिक्षण महाविद्यालयों की स्थापना की जाय।

कोठारी कमीशन द्वारा शिक्षकों की स्थिति के उन्नयन के लिए विभिन्न प्रकार की महत्वपूर्ण सिफारिशों का उल्लेख करना समीचीन है।

आयोग द्वारा वेतन, पदोन्नति, सेवानिवृत्ति इत्यादि के बारे में सुझाव दिये है, लेकिन जो महत्वपूर्ण तथ्य है, कार्य के निर्धारण में कक्षा शिक्षण के अतिरिक्त शिक्षक द्वारा किये गये अन्य कार्यो को भी शामिल किया जाय। निजी शिक्षण संस्थानों में कार्यरत शिक्षकों की सेवाशर्ते सरकारी शिक्षण संस्थानों के समान होनी चाहिए। आयोग ने शिक्षा शास्त्र एवं प्रशिक्षण शास्त्र को भिन्न करने के बात की ताकि शिक्षण प्रशिक्षण की प्रभावशीलता को बढ़ाया जा सकें।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में भी अध्यापकों के बारे में विस्तृत सुझाव उपलब्ध कराये गये है। सरकार और समाज द्वारा शिक्षकों के लिए ऐसी परिस्थितियों का निर्माण करना चाहिए ताकि वह सृजन और निर्माण की ओर बढ़ सकें। अध्यापक में अपने समुदाय के उत्थान के लिए नवाचारी प्रवृत्तियों का प्रयोग स्वतन्त्र रूप से कर सके।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में अध्यापकों के कर्तव्यों, प्रशिक्षण, नियुक्ति इत्यादि पर विशेष रूप से चर्चा की गयी है, इसमें कहा गया है, कि शिक्षक वास्तव में बच्चों के भविष्य को आकार देते है। अतः हमारे राष्ट्र का निर्माण करते है। शिक्षकों को समाज में उच्चतर दर्जा प्राप्त हो उसके सम्मान के भाव को पुर्नजीवित किया जा सके। कुछ अन्य सिफारिशें का उल्लेख आवश्यक है।

- शिक्षक–समुदाय का सम्बन्ध मजबूत हो।
- शिक्षक पात्रता परीक्षा सामाग्री तथा शिक्षाशास्त्र दोनों के संदर्भ में बेहतर परीक्षा सामाग्री को विकसित करने के लिए मजबूत किया जाएगा।
- शिक्षण के प्रति जोश या उत्साह को जॉचने के लिए कक्षा में पढ़ाने का प्रदर्शन करना भर्ती प्रक्रिया का अनिवार्य अंग होना चाहिए। अध्यापकों की उपलब्धता बढ़ाने के लिए स्कूल काम्प्लेक्स का निर्माण हो।
- शिक्षकों, छात्रों, अभिभावकों, प्रधानाध्यापकों और अन्य सहायक कर्मचारी के मध्य समावेशी समुदाय का निर्माण हो सके।
- शिक्षकों को ज्यादातर समय गैर–शिक्षण गतिविधियां करने में व्यतीत होने से रोकने के लिए शिक्षक को ऐसे कार्य जो शिक्षण से सीधे सम्बन्धित नही है, उनकों करने की अनुमति नही होगी।
- शिक्षकों को ऐसी शिक्षण विधि अपनाने के लिए सम्मानित किया जाएगा जिससें कक्षा में विद्यार्थियों के सीखने के प्रतिफल में वृद्धि हों।

निष्कर्ष–

विभिन्न कालों, आयोगों, समितियों के सुझावों का उल्लेख ऊपर किया गया, लगभग सभी आयोगों द्वारा अध्यापकों के जीवन स्तर का उन्नयन करने की बात की है। अध्यापक का मूल्य क्या है, शिक्षा को सेवा के रूप में छात्रों को प्रदान करना, कुछ दार्शनिक सम्प्रदायों में शिक्षक को भगवान से ऊपर रखा गया है, शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में शिक्षक, छात्र, पाठ्यक्रम तीनों में समन्वय होना नितान्त आवश्यक है, शिक्षक को समाज का पूर्ण ज्ञान, विद्यार्थी का पूर्ण ज्ञान हो, नवाचारी तथा परम्परागत शिक्षा प्रणामी में समायोजन कर सके। अतः वर्तमान में यह आवश्यक हो गया है कि शैक्षिक नीतियों के निर्माण में अध्यापकों को केन्द्र–बिन्दु में रखना चाहिए। सरकार को भी इस

तथ्य पर विचार करना चाहिए अध्यापक का कार्य मानव निर्माण का है, उसे कर्मचारी न समझाा जाय, स्कूल को कारखाना न माना जाय, जिस प्रकार से एक कृषक को अपनी जमीन, बीज और स्थानीय परिस्थितियों का ज्ञान होता है, उसी तरह शिक्षक को अपने छात्रों तथा स्थानीय परिस्थितियों का ज्ञान होता है। शिक्षा एक सामाजिक कर्तव्य है, उसे राजनीतिक अवधारणा में बदलना राष्ट्र हित में उपयोगी नही हो सकती है। अतः आज अध्यापक में पुराने गौरव को पुनः स्थापित करने के लिए राष्ट्रीय कार्य के अतिरिक्त समस्त गैर शैक्षणिक कार्यो से मुक्त किया जाय। यही अभिलाषा राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की भी की गयी है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

सिंह, कर्ण भारत में शिक्षा प्रणाली का विकास एवं चुनौतियॉ राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, नई दिल्ली।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार देवी कुसुम समावेशन शिक्षा में अध्यापकों उत्तरदायित्व एवं भूमिका भट्टाचार्य जी0सी0–भारत में अध्यापक शिक्षा।

लाल रमन बिहारी– भारत में शिक्षा का विकास एवं चुनौतिया।

मिश्रा एम0के0बी0पी0 शर्मा– भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास।